भारतीय संस्कृति में यज्ञोपवीत संस्कार का महत्त्व

(उपनयन संस्कार के बारे में जानने योग्य कुछ बातें)

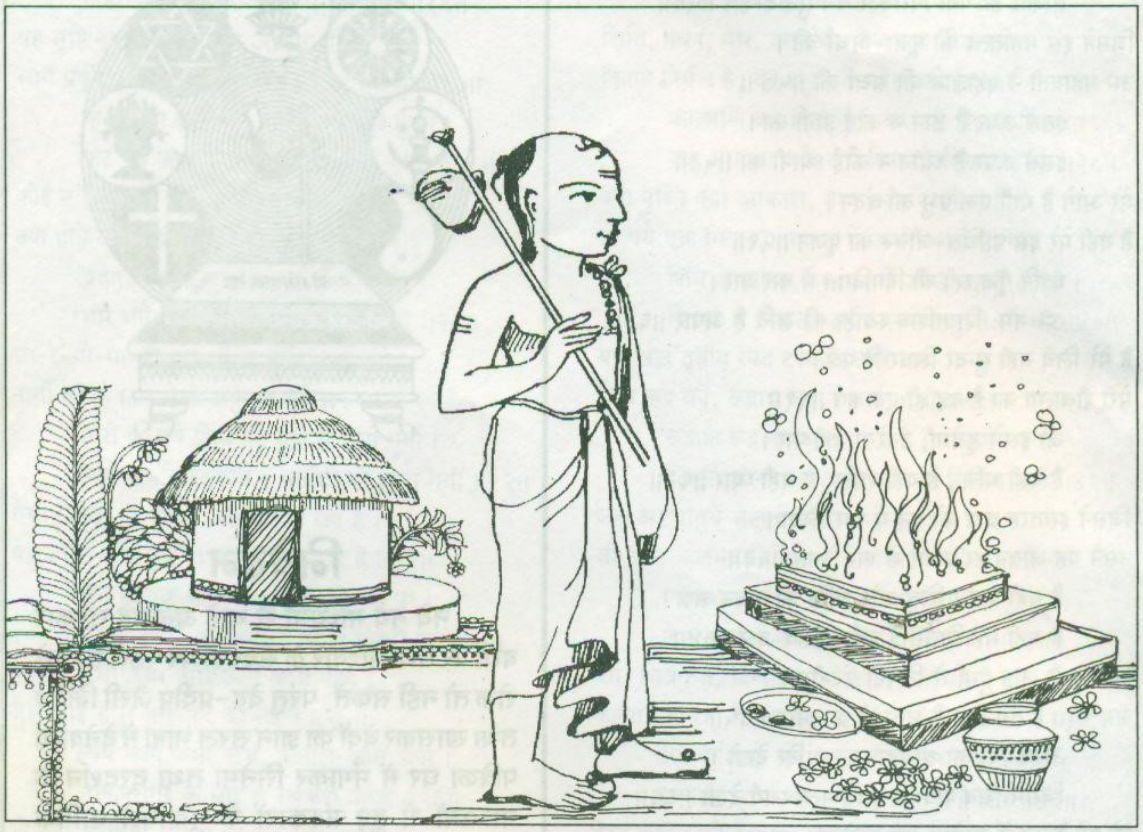

''हिन्दू सनातन धर्म में १६ संस्कार होते हैं- इन १६ संस्कारों में यज्ञोपवीत या उपनयन संस्कार का विशेष महत्त्व है :-

यज्ञोपवीत का अर्थ :-

''यज्ञ+उपवीत दो शब्दों के मेल से यज्ञोपवीत शब्द बना है जिसका अर्थ होता है यज्ञ केलिये जो धारण किया जाय- जिसके धारण किये बिना कोई भी यज्ञ नहीं किया जा सकता'' यज्ञोपवीत संस्कार (उपनयन) हो जाने के बाद ब्राह्मण बालक द्विज कहलाता है।

उपनयन का अर्थ :-

उन+नयन = पास ले जाना जो गुरू के पास ले जा सके - यज्ञोपवीत के बाद ही बालक गुरू के पास वेदाध्ययन को जाता है। यज्ञोपवीत को साधारण क्रम में जनेऊ भी कहते हैं अथर्ववेद में उपनयन शब्द का अर्थ ''ब्रह्मचारी को ग्रहण करने के अर्थ में किया गया है- **(उपनयमानो ब्रह्मचारिणम्)**

मनु ने मनुस्मृति में कहा है (२-१७०) उपनयन द्वितीय द्वितीय जन्म वैदिक या ब्रह्मजन्म में -जिसका प्रतीक मूंज से बनी मेखला का धारणकरना है - सावित्री ब्रह्मचारी की माता और आचार्य पिता हैं।

''तत्र यद् ब्रह्मजन्मास्य मौजीबन्धनचिह्नितम् ।
तत्रास्य माता सावित्री पिता त्वाचार्य उच्यते ॥

भारुचि ने वीरमित्रोदय में कहा है - ''उपनयन वह कृत्य है जिसके द्वारा बालक आचार्य के समीप ले जाया जाय- अर्थात्- वह कृत्य जिसके द्वारा व्यक्ति गुरू वेद यम नियम का व्रत और देवता के सामीप्य के लिये दीक्षित किया जाय उपनयन कहलाता है।

''गुरोर्व्रतानां वेदस्य यमस्य नियमस्य च ।
देवतानां समीपं वा येनासौ नीयतेऽसौ'' ॥

उपनयन संस्कार का प्रयोजन :-

आपस्तम्ब और भारद्वाज ऋषि विद्या की प्राप्ति को उपनयन का उद्देश्य मानते हैं।

उपनयन विद्याध्ययन के लिये इच्छुक व्यक्ति के श्रुति के अनुसार संस्कार को कहते हैं -

उपनीय गुरू: शिष्यं महाव्यादृतिपूर्वकम्
वेदमध्यापयेदेनं शौचाचारांश्च शिक्षयेत्
उपनयन विद्यार्थस्य श्रुतित: संस्कार इति

उपनयन एक विद्यासंस्कार था- उस समय आचार्य द्वारा प्रदत्त व्रतादेश का स्थान गौण था किन्तु जब इसे दैहिक संस्कार का रूप प्राप्त हुआ तो संस्कार का कर्म काण्ड ही सर्वाधिक महत्वपूर्ण बन बैठा।

उपनयन की आयु :-

''गृह्यसूत्रों'' में प्रतिपादित तथा परवर्ती आचार्यों द्वारा अनुमोदित साधारण नियम यह था कि ब्राह्मण का उपनयन आठवें बर्ष में क्षत्रिय का ग्यारहवें वर्ष में करना चाहिये। इसका अर्थ यह लगाया गया था कि ब्राह्मणों की गायत्री आठ अक्षरों की-क्षत्रियों की ११ अक्षरों की तथा वैश्यों की १२ अक्षरों की होती है।

मनु कहते हैं - ब्रह्मवर्चस की प्राप्ति के लिये इच्छुक ब्राह्मण का पांचवे, बल के लिये क्षत्रिय का छठे और ऐश्वर्य के लिए इच्छुक वैश्य का उपनयन संस्कार आठवें वर्ष में करना चाहिये।

ब्रह्मवर्चसकामस्य
कार्य विप्रस्य पंचमें।
राज्ञो बलार्थिन: षष्ठे
वैश्यस्यार्थिनो ऽष्टमें ॥

फिर बाद में - उपनयन संस्कार की अन्तिम सीमा बाह्मण के लिये सोलह - क्षत्रिय के लिये बाईस और वैश्य के लिये चौबीस हो गई (पाराशर गृह सूत्र २-५-३६-३८)

उपनयन की अनिवार्यता -

''उपपिषद काल में उपनयन को अनिवार्य कर दिया गया - सर्व प्रथम इसकी पृष्ठभूमि में सांस्कृतिक कारण था- यह शिक्षा को व्यापक करने के उद्देश्य से किया गया - क्योंकि प्रत्येक आर्य बालक को अपने जीवन का कुछ काल गुरूकुल अथवा किसी शिक्षा संस्था में व्यतीत करना पड़ता था - उस समय यह भी विश्वास जागृत हो गया था कि उपनयन में पवित्र करने की शक्ति विद्यमान रहती है।

यज्ञोपवीत की बनावट -

एक यज्ञोपवीत में तीन तन्तु (धागे) रहते हैं - प्रत्येक धागे में तीन धागे लिपटे रहते हैं - इस तरह कुल नौ धागे रहते हैं - इन सब धागों की कुल लम्बाई ९६ चावा या चौआ होती है (चारों अंगुलियों के चारों और एक बार लपेटा हुआ धागा एक चौआ या चावा कहलाता है)

एक चावा १००० मंत्र का माना जाता है।- इस तरह ९६ चावा ९६००० मंत्रो के द्योतक हैं - केवल ब्राह्मण के लिये ९६ चावा लंबे धागे का जनेऊ बनाया जाता है। एक मान्यता के अनुसार ब्रह्माजी ने धागा बनाया विष्णु से उसे त्रिगुण किया - ३२ चावा को त्रिगुण करने पर ३२ १/२ चावा लंबा रह जाता है जनेऊ अब तीन धागा हो जाने पर तीन तन्तु हो जाते हैं। जनेऊ में ९ तन्तु रहते तीन तन्तु १)सत् २)रज और ३) तम तीन गुणों के द्योतक रहते हैं

यज्ञोपवीत में नौ देवताओह का वास रहता है :-

१) प्रथम सूत्र में अंगर प्रणव का वास
२) दूसरे में अग्नि देवता का वास
३) तीसरे में सपनि देवता अथवा सर्प का वास
४) चौथेमे चन्द्रमा का वास
५) पांचवे में पितृ देवता का वास
६) छठवे में प्रजापति ब्रह्मा का वास
७) सातवें में अनिल या वायु देवता का वास
८) आठवे में यम देवता का वास
९) ९ वे सम्पूर्ण देवताओं का वास माना जाता है

यज्ञोपवीत की गांठ -

यज्ञोपवीत में सर्वप्रथम भगवान शिव ने गांठ लगाई थी - पहिले एक ब्रह्म गांठ उसके बाद प्रवर के अनुसार घरों में गांठ लगाई जाती है। एक घोर में एक गांठ दूसरे में दो या एक घोर में दो और दूसरे में तीन क्योंकि प्रवर मुख्य ३ या ५ होते हैं।

यज्ञोपवीत के ९६ चौआ या चावा का तात्त्विक महत्त्व :-

यज्ञोपवीत के ९६ चावा का संबंध हमारे जीवन की निम्नलिखित चीजों से भी एक महत्वपूर्ण श्लोक में दर्शाया गया है -

'' तिथिवारं च नक्षत्रं
तत्व वेद समन्वितम्।
मासानां त्रिसन्ध्यं च
त्रिदेवा सूत्र लक्षणम्'' ॥

अर्थात् - तिथि = १५
वार = ०७
(दिन)
नक्षत्र = २७+१ अभिजित नक्षत्र-जिसमें भगवान राम का जन्म हुआ था।
तत्त्व = २४
वेद = ०४
मास = १२
संध्या = ०३
देव = ०३
= ९६

जनेऊ धारण करने वाले ब्राह्मण के गुण:-

यज्ञोपवीत धारण करने वाले ब्राह्मण में नौ गुण होना

चाहिये:-

शमो दमस्तप: शौचं क्षान्तिमार्जवमेव च ।
ज्ञान विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्म कर्म स्वभावजम् ।।

अर्थात् -१) शम = क्रोध न करना
२) दम = इन्द्रियों को वश में रखना
३) तप: = तपश्चर्या
४) शान्ति = शान्तता
५) शौचम = बाहरी और भीतरीपवित्रता
६) आर्जवम् - कोमलता
७) ज्ञान - सांसारिक ज्ञान
८) विज्ञान = आध्यात्मिक विशेष ज्ञान
९) आस्तिक्यम् = अपने इष्ट पर निष्ठा एवं विश्वास रखना

यज्ञोपवीत में आचार्य द्वारा दिया जाने वाला गायत्री मंत्र -

ॐ भू: भुव: स्व: - तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो
देवस्य धीमहि धियो यो न: प्रचोदयात् ।

यह तीन आवृतियों में दिया जाता है ।।

यज्ञोपवीत धारण करना :-

जनेऊ पहनने के पहले तीन देवताओं के लिये विनियोग करना चाहिये विनियोग में एक आचमनी जल पृथ्वी में छोड़ा जाता है - फिर उस देवता का आवाहन करना चाहिये -

१) विनियोग - ग्रन्थि मध्ये ब्रह्मा आवाहने विनियोग:
आवाहन - ॐ ब्रह्मा यज्ञानम् प्रथमं पुरस्तात्
विसी मत: सुरूचो प्येनऽआव:।
स बुद्धया उपमाऽअस्यत्विष्ठा सतश्च
योनिम् सतश्चत्विय: ।

२) विनियोग - ग्रन्थि मध्ये विष्णु आवाहने विनियोग:
आवाहन - ॐ विष्णु विचक्रमे त्रेधानिदवे
पदम् समूढमस्य पाग्वं गुरवे स्वाहा

३) विनियोग - ग्रन्थि मध्ये रूद्र आवाहने विनियोग:
आवाहन - ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम् पुष्टिवर्धनम्
- उर्वारूकमिव बन्धनान् मृत्यों र्मुक्षीय मामृतात्

इसके बाद अपने इष्ट का ध्यान कर जनेऊ को दोनों हाथों के अंगूठे में फँसाकर सूर्य भगवान को दिखाकर यज्ञोपवीत को पहनने का मंत्र पढ़कर जनेऊ पहनना चाहिये - जिस का विवाह हो चुका है - उसे एक के बाद एक अर्थात दो जनेऊ धारण करना चाहिये ।

यज्ञोपवीत धारण करने का मंत्र -

ॐ यज्ञोपवीतं परमं पवित्रम्
प्रजापतेर्यत् सहज: पुरस्तात्
आयुष्य मग्रं प्रतिमुंच तेज: यज्ञोपवीतं परमं पवित्रम्

इसके बाद यथाशक्ति गायत्री जप करें ।

लघुशंका - शौच आदि जाने के पूर्व जनेऊ को दाहिने कान में तीन बार लपेटना चाहिये ।

यज्ञोपवीत का अशुद्ध होना :-

लघुशंका या शौच के समय जनेऊ को कान में लपेटना भूल जाना जनेऊ का टूट जाना, उतर जाना, ग्रहण पड़ने पर शव यात्रा में जाना या अशौच के समय आदि अशुद्ध जनेऊ को उतारने के पहले शुद्ध जनेऊ पहिन लेना चाहिये-फिर नीचे लिखे मंत्र से अशुद्ध जनेऊ को सिर के मार्ग से उतार कर शुद्ध स्थान में रखकर अथवा जल में प्रवाहित कर देना चाहिये ।

यज्ञोपवीत को उतारने का मंत्र :-

ॐ एतावद्दिन पर्यन्तं ब्रह्मत्वं धारितं मया ।
जीर्णत्वात् तत्परित्यागो गच्छ सूत्र यथा सुखम् ।।

यज्ञोपवीत में विधि विधान(कर्मकाण्ड)और उसका महत्त्व

इस संस्कार में १) समय २) आयोजनाएँ ३) सहभोज ४) स्नान ५) कौपीन धारण ६) मेखला ७) यज्ञोपवीतधारण ८) अजिनधारण ९) दण्डधारण १०) प्रतीकात्मक कृत्य ११) हृदय स्पर्श १२) अश्मारोहण १३) आचार्य द्वारा विद्यार्थी का स्वीकरण १४) आदेश १५) सावित्री मन्त्र १६) आहवनीय अग्नि १७) भिक्षा १८) नवीन तत्त्व शिक्षा ग्रहण १९) त्रिरात्र वृत-आदि के बाद माता पिता गुरू और सम्मानित जनों का आशीर्वाद इसमें लिया जाता है - यथानुसार आचार्य को वस्त्र-अन्न-दक्षिणा भेंट दान स्वरुप दी जाती हैं

यज्ञोपवीत संस्कार का प्रयोजन :-

शौनक ऋषि के अनुसार ''जगत् की धात्री सावित्री देवी स्वयं ही मेघा स्वरूपिणी हैं - विद्या में सिद्धि प्राप्त करने के लिए इच्छुक व्यक्ति को मेघा की वृद्धि के लिये उसकी पूजा करनी चाहिए बालक को बुद्धिमान, शक्तिमान, मेघावान और संस्कारवान बनाने के लिये उपनयन संस्कर का बहुत महत्त्व था और आज भी है ।

नवयुग के उदय में उपनयन संस्कार की बदली हुई मान्यतायें

वातवरण और सामाजिक दोष :-

''जिस समय उपनयन विद्यार्थी जीवन के आरम्भ में होने वाला एक सजीव संस्कार था - उस समय निश्चय ही इसके फल स्वरूप अत्यन्त प्रभावकर वातावरण उत्पन्न हो जाता था - यह उपनीत बालक के जीवन में एक नवीन अध्याय के आरंभ का सूचक था - बालक पूर्ण व कठोर अनुशासन के जीवन में प्रवेश करता था यह संस्कार इस तथ्य का प्रतीक था कि विद्यार्थी ज्ञान के असीमित पथ का पथिक है । अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिये उससे अपने निश्चय में पत्थर के समान दृढ़ता तथा शक्ति की अपेक्षा की

जाती थी। आचार्य तथा उसके बीच पूर्ण ऐकमत्य भी आवश्यक था। समस्त विश्व के सर्वाधिक तेजस्वी तथा शक्ति और उच्च स्थान के द्योतक इन्द्र और जीवन तथा प्रकाश के सूचक सूर्य एवं अग्नि के आदर्श प्रस्तुत किये जाते थे - संस्कार के उक्त प्रतीकों तथा शिक्षा के अनुरूप व्यवहार करने पर उसका संसार के दायित्वों को वहन करने में समर्थ पूर्ण मनुष्य तथा एक सफल विद्वान बनना निश्चित था -

पर वर्तमान में उपनयन संस्कार में बहुत सी विसंगतियां जुड़ गई हैं - जो इस संस्कार के सामने प्रश्नचिन्ह बनकर खड़ी हो गई हैं।

''या सावित्री जगद्धात्री सैव मेधा स्वरूपिणी।
मेधा प्रसिद्धये पूज्या विद्या सिद्धिमभीप्सता''॥
सदा सर्वदा लभते जय मंगलम्-शुभमस्तु कल्याणमस्तु

-आचार्य विद्यावाचस्पती
डॉ. राजेशजी उपाध्याय-नार्मदेय
श्री कृष्णार्जुन सदन श्री. राजेन्द्र टॉकिज के पीछे, ३ रा मकान
शहडोल (म. प्र.) ४८४ ००१